दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

सुरक्षित: 16 जनवरी, 2024

उद्घोषित: 31 मई, 2024

<u>सि.वा. (मू.प.) 2033/2007</u>

महावीर सिंघवी
ए-302, एक्सटर्नल अफेयर्स हॉस्टल,
कस्तूरबा गांधी मार्ग,
नई दिल्ली-110001।

..... वादी

द्वारा: श्री आदिल सिंह बोपाराई, श्री सुमेर सिंह बोपाराई, श्री सादिक नूर, अधिवक्तागण के साथ वादी वैयक्तिक रूप से।

बनाम

1. **हिंदुस्तान टाइम्स लिमिटेड**
हिंदुस्तान टाइम्स (अंग्रेजी दैनिक)
18-20, कस्तूरबा गांधी मार्ग,
नई दिल्ली-110001।

2. **श्री वीर संघवी**
संपादक,
हिंदुस्तान टाइम्स (अंग्रेजी दैनिक)
हिंदुस्तान टाइम्स लिमिटेड,
18-20, कस्तूरबा गांधी मार्ग,

नई दिल्ली-110001।

3. **श्री सौरभ शुक्ला**
रिपोर्टर/संवाददाता
हिंदुस्तान टाइम्स (अंग्रेजी दैनिक)
हिंदुस्तान टाइम्स लिमिटेड,
18-20, कस्तूरबा गांधी मार्ग,
नई दिल्ली-110001।

.....प्रतिवादीगण

द्वारा: श्री एम. दत्ता और श्री आदित्य गुहा, अधिवक्तागण।

<u>सि.वा. (मू.प.) 2034/2007</u>

महावीर सिंघवी
ए-302, एक्सटर्नल अफेयर्स हॉस्टल,
कस्तूरबा गांधी मार्ग,
नई दिल्ली-110001।

.....वादी

द्वारा: श्री आदिल सिंह बोपाराई, श्री सुमेर सिंह बोपाराई, श्री सादिक नूर, अधिवक्तागण के साथ वादी वैयक्तिक रूप से।

बनाम

1. **हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड**
हिंदुस्तान (हिंदी दैनिक)
हिंदुस्तान टाइम्स प्रेस
18-20, कस्तूरबा गांधी मार्ग,

नई दिल्ली-110001।

2. **श्रीमती मृणाल पांडे**
संपादक,
हिंदुस्तान (हिंदी दैनिक)
हिंदुस्तान टाइम्स प्रेस,
18-20, कस्तूरबा गांधी मार्ग,
नई दिल्ली-110001।

3. **श्री राकेश कुमार सिंह**
रिपोर्टर/संवाददाता
हिंदुस्तान (हिंदी दैनिक)
हिंदुस्तान टाइम्स प्रेस,
18-20, कस्तूरबा गांधी मार्ग,
नई दिल्ली-110001।

.....प्रतिवादीगण

द्वारा: श्री एम. दत्ता और श्री आदित्य गुहा, अधिवक्तागण।

कोरम:
माननीय न्यायमूर्ति सुश्री नीना बंसल कृष्णा

<u>निर्णय</u>

"प्रतिष्ठा, भले ही कमजोर हो, उस पर असत्य हमले का सामना करने की दृढ़ता होती है। अंत में जीत व्यक्ति के चरित्र की सच्चाई की ही होती है।"

1. वादी द्वारा प्रतिवादीगण के खिलाफ उनकी प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँचाने के लिए 5 करोड़ रूपये *मुआवजे/हर्जाने* के लिए उपरोक्त दो वाद दायर किए गए हैं।

2. अपने छात्र जीवन में वादी, राजस्थान का एक प्रसिद्ध व्यक्ति थे और विभिन्न समाचार पत्रों ने लगातार उनकी शैक्षिक उपलब्धियों को प्रमुखता से छापा था। उनका शैक्षणिक रिकॉर्ड असाधारण रूप से शानदार था और वे एक सफल व्यक्ति थे तथा उन्होंने राजस्थान विश्वविद्यालय से स्वर्ण पदक प्राप्त किया था। उनका संघ लोक सेवा आयोग (यू.पी.एस.सी.) द्वारा वर्ष 1995 और वर्ष 1999 में दो बार संघ सिविल सेवा के लिए और राजस्थान प्रशासनिक सेवा परीक्षा के लिए भी चयन हुआ था। वर्ष 1999 में, वादी को भारतीय विदेश सेवा में नियुक्त किया गया। उन्होंने 20.09.1999 को लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी में प्रवेश लिया। प्रशिक्षण अवधि के दौरान उनके आचरण और प्रदर्शन की सराहना की गई और उन्हें प्रशंसा पत्र दिया गया। इसके बाद, वह विदेश सेवा संस्थान, नई दिल्ली में कार्यभार ग्रहण किया और एफ.एस.आई. में अपने कार्यकाल के दौरान उनके काम की फिर से सराहना की गई।

3. वादी ने दावा किया है कि **समाचारपत्र "हिंदुस्तान टाइम्स**"/प्रतिवादी संख्या 1 ने अपने प्रकाशक श्री राकेश शर्मा और प्रतिवादी संख्या 2 और 3, श्री वीर सांघवी और श्री सौरभ शुक्ला, जो क्रमशः संपादक और संवाददाता हैं, के द्वारा दिनांक 19.07.2002 को "आई.एफ.एस. परिवीक्षाधीन अधिकारी को टेप

में कदाचार साबित होने के बाद बर्खास्त" शीर्षक के अंतर्गत एक लेख प्रकाशित किया। ऐसी ही खबर **21.07.2002 को समाचारपत्र "हिन्दुस्तान"** के हिंदी संस्करण में *"शादी से इंकार करने पर अधिकारी ने युवती का जीना हराम किया"* शीर्षक से प्रकाशित हुई। दावा किया कि दोनों समाचारपत्रों में प्रकाशित ये लेख भारतीय प्रेस परिषद द्वारा जारी पत्रकारिता आचरण के मानदंडों का घोर उल्लंघन थे। टेप में महिला के साथ आपत्तिजनक बातचीत और वादी द्वारा इस्तेमाल की गई अपमानजनक और अपशब्दों वाली भाषा के संबंध में इन लेखों में उल्लिखित तथ्यों में बिल्कुल भी सच्चाई नहीं है। ऐसी बातचीत कभी भी किसी भी महिला के साथ नहीं हुई, इसके बावजूद सार्वजनिक रूप से वादी को बदनाम करने के गुप्त उद्देश्य से इस संबंध में मानहानिकारक तथ्य प्रकाशित किए गए।

4. वादी ने आरोप लगाया है कि उसे बदनाम करने के इरादे से और चरित्र हनन के उद्देश्य से, लेख को किसी अन्य व्यक्ति के बारे में कहानियों के साथ बहुत चतुराई से प्रकाशित किया गया था, लेकिन लेख का पूरा दबाव और प्रभाव वादी पर पड़ा है, जिसके परिणामस्वरूप उसे अत्यधिक नुकसान हुआ। यह दावा किया गया है कि यह लेख कुछ असंतुष्ट व्यक्तियों के साथ साजिश के तहत प्रकाशित किया गया है।

5. वादी ने जोर देकर कहा है कि लेख में दिए गए कथन/टिप्पणी, वास्तव में मानहानिकारक अर्थ में समझा जा सकता है और लेख में प्रयुक्त शब्दों एवं

वाक्यों ने वास्तव में वादी की प्रतिष्ठा चोट पहुंचाया है और स्वच्छ छवि को नुकसान पहुंचाया है। शीर्षक, भाषा, शब्द और संदर्भ सहित समग्र रूप से लेख का निश्चित ही मानहानिकारक अर्थ है जो दोनों लेखों को पढ़ने से ही स्पष्ट हो जाता है।

6. प्रतिवादीगण ने अपने द्वारा किए गए गलत काम को छिपाने के लिए अंग्रेजी समाचार दैनिक *"हिंदुस्तान टाइम्स"* में 30.08.2002 को एक और लेख प्रकाशित किया जिसका 'शीर्षक था *''परिवीक्षाधीन अधिकारी की बर्खास्तगी पर विदेश कार्यालय दुविधा में।''* इस लेख की विषय-वस्तु से पता चलता है कि यह इसके पहले के लेख का विरोधाभासी है जो यह स्पष्ट करता है कि दिनांक 19.07.2002 का पिछला लेख निराधार था तथा दुर्भावना से प्रकाशित किया गया था।

7. अपने जीवन और शानदार करियर की शुरुआत में घटनाओं के अभूतपूर्व मोड़ से व्यथित और आघातग्रस्त, वादी समाचार पत्रों की रिपोर्टों से व्यथित था, जिसने उसके अनुमान में उसकी गरिमा को ठेस पहुंचाई, सहकर्मियों, दोस्तों, परिवार के सदस्यों और आम जनता की नजरों में उसकी प्रतिष्ठा, नैतिक और बौद्धिक चरित्र को कम कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप उसकी प्रतिष्ठा को भारी नुकसान पहुंचा है। उन्होंने दावा किया है कि इसके गंभीर प्रतिकूल सामाजिक-आर्थिक परिणाम भी हुए हैं। वादी की माँ इस सदमे को सहन नहीं कर सकी और बिस्तर पकड़ ली, जिसने अंततः झूठी, अपमानजनक, निंदनीय

और मानहानिकारक लेख के कारण निरंतर मानसिक आघात, तनाव, मानहानि और उत्पीड़न ने उसकी जान ले ली। वादी की बहनों की शादी की बातचीत, जो एक प्रतिष्ठित परिवार के भावी दूल्हे के साथ चल रही थी, इस लेख के कारण विफल हो गई। वादी और उसके परिवार को बिना किसी आधार के जीवन भर के लिए कलंकित कर दिया गया है।

8. वादी ने लगातार मानसिक स्वास्थ्य खराब होने के कारण नुकसान के लिए 2.5 करोड़ रुपये तथा अपनी प्रतिष्ठा को हुए नुकसान के लिए 2.5 करोड़ रुपये की मांग की है, जो दोनों वादों में कुल मिलाकर 5 करोड़ रुपये है। याचिकाकर्ता ने रुपये की मांग की है।

9. प्रतिवादीगण ने अपने **लिखित कथन** में प्रारंभिक आपत्ति जताई कि प्रतिवादीगण ने सद्भावनापूर्वक तथा बिना किसी दुर्भावना के उचित तत्परता के साथ कार्य किया है। प्रतिवादी संख्या 3, कथित लेख की विषय-वस्तु की सच्चाई को मानते हुए, केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण, मुख्य शाखा, नई दिल्ली के समक्ष *"महावीर सी. सिंघवी बनाम भारत संघ"* में मू.अ. संख्या 2038/2002 में भारत संघ द्वारा दायर उत्तर द्वारा प्रमाणित और पुष्ट किया गया। प्रतिवादीगण ने दावा किया है कि उन्होंने पत्रकारिता संबंधी नैतिकता का पालन किया है तथा उनसे सभी मामलों में पत्रकारिता संबंधी मानकों और मानदंडों का पालन किए जाने की अपेक्षा की जाती है।

10. ***गुणागुण के आधार पर,*** वाद में किए गए सभी प्रकथनों को अस्वीकार किया जाता है। यह दावा किया गया कि प्रतिवादी संख्या 1 और 2 को प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा लिखे गए लेख के लिए प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी बनाने की मांग की गई है, जिसके बारे में उन्हें कोई व्यक्तिगत जानकारी नहीं थी। प्रतिवादी संख्या 3 ने भी लेख प्रकाशित कराने से पहले, तथ्यों की सत्यता का पर्याप्त सत्यापन और स्वतंत्र स्थापना की थी तथा अपने लेख में तथ्यों को सार्वजनिक रूप से रिपोर्ट करने से पहले सद्भावनापूर्वक इसकी पुष्टि की थी। यह प्रकाशन द्वेष रहित तथा रिपोर्टिंग निष्पक्ष थी। यह प्रस्तुत किया गया कि वर्तमान वाद में कोई गुणागुण नहीं है और इसे खारिज किया जाना चाहिए।

11. वादी ने प्रत्युत्तर में, वादपत्र में निहित दावों को दोहराया है।

12. **सि.वा.(मू.प.) 2033/2007 वाले वाद में मुद्दों को** 19.11.2007 को निम्नानुसार विरचित किया गया था:-

> *(i) क्या 19 जुलाई, 2002 को 'द हिंदुस्तान टाइम्स' में प्रकाशित समाचार लेख ने वादी को बदनाम किया है, यदि हाँ, तो किस प्रकार से? वादी पर साबित करने का भार है।*
>
> *(ii) क्या वादी हर्जाने का हकदार है, यदि हाँ, तो कितना? वादी पर साबित करने का भार है।*
>
> *(iii) क्या वादी ब्याज का हकदार है, यदि हाँ, तो किस राशि पर, किस अवधि के लिए और किस दर पर? वादी पर साबित करने का भार है।*
>
> *(iv) क्या न्यायालय फ़ीस और अधिकार क्षेत्र के उद्देश्य से वाद का उचित मूल्यांकन नहीं किया गया है और उचित न्यायालय फ़ीस का भुगतान नहीं किया गया है? वादी पर साबित करने का भार है।*

(v) राहत

13. ***सि.वा.(मू.प.) 2034/2007 वाले वाद में*** 19.11.2007 को निम्नानुसार ***मुद्दे विरचित किए गए***:-

> *(i) क्या हिंदुस्तान में प्रकाशित 21 जुलाई, 2002 के समाचार लेख ने वादी को बदनाम किया है, यदि हाँ, तो किस प्रकार से? वादी पर साबित करने का भार है।*
>
> *(ii) क्या वादी हर्जाने का हकदार है, यदि हाँ, तो कितना? वादी पर साबित करने का भार है।*
>
> *(iii) क्या वादी ब्याज का हकदार है, यदि है, तो किस राशि पर, किस अवधि के लिए और किस दर पर? वादी पर साबित करने का भार है।*
>
> *(iv) क्या न्यायालय फीस और अधिकार क्षेत्र के उद्देश्य से वाद का उचित मूल्यांकन नहीं किया गया है और उचित न्यायालय फ़ीस का भुगतान नहीं किया गया है? वादी पर साबित करने का भार है।*
>
> *(v) राहत*

14. अभि.सा.-1 के रूप में वादी ने शपथ पत्र प्र.अभि.सा.1/ए के द्वारा अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया।

15. *अभि.सा.-2 श्री अश्विनी तनेजा, अभि.सा.-3, श्री महिप चैंबर और अभि.सा.-4, डॉ. संजीव गेमावत* ने अपने-अपने साक्ष्य के शपथ पत्र में कहा है कि वादी उन्हें जानता था और लेख के बाद, वादी की प्रतिष्ठा उनकी दृष्टि में कम हो गई।

16. विदेश मंत्रालय (एम.ई.ए.), दिल्ली में *अनुभाग अधिकारी, श्री दिग विजय नाथ अभि.सा.-5*, ने विदेश मंत्रालय द्वारा दिनांक 13.06.2002 को जारी आदेश

प्र.अभि.सा.-5/1 की प्रमाणित प्रति और दिनांक 12.01.2004 को जारी पत्र प्र.अभि.सा.-5/2 की कार्यालय प्रति प्रस्तुत की है।

17. *अभि.सा.-6 श्री हरीश गिरधर, सहायक, भारतीय प्रेस परिषद* ने भारतीय प्रेस परिषद द्वारा मुद्रित "पत्रकारिता आचरण के मानदंड" संस्करण 2005 *प्र.अभि.सा.*-6/1 पेश किया।

18. *अभि.सा.-7, श्री दीपक शाहानी, वरिष्ठ प्रबंधक, एल्कोबेक्स मेटल्स लिमिटेड,* ने दिनांक 21.11.2005 के पत्र *प्र.अभि.सा.*-7/1 को साबित कर दिया, जिसके कारण अल्कोबैक्स मेटल्स लिमिटेड ने उन्हें अपने संगठन में नियुक्त करने से इनकार कर दिया क्योंकि उन्हें *"हिंदुस्तान टाइम्स"* में प्रकाशित लेख में बताए गए दुर्व्यवहार के कारण भारतीय विदेश सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था।

19. *श्री राकेश शर्मा, प्रतिवादी सं. 1 'हिंदुस्तान टाइम्स' के प्रकाशक,* ने प्र.प्र.सा.-1/ए के द्वारा अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया और यह प्रमाणित किया कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रकाशित प्रत्येक लेख मात्र रिपोर्टिंग है और नैतिकता और सत्यनिष्ठा के उच्चतम मानकों का पालन करता है, जिसका किसी भी व्यक्ति को बदनाम करने, कमजोर करने या नुकसान पहुँचाने का कोई इरादा नहीं है।

20. *वादी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है* कि उन्हें भारतीय विदेश सेवा (आई.एफ.एस.) में 20.09.1999 को नियुक्त किया गया

था, जब वे परिवीक्षाधीन थे, किंतु उन्हें 13.06.2002 को बर्खास्त कर दिया गया। उन्होंने केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण (सी.ए.टी.) के समक्ष अपनी बर्खास्तगी को चुनौती दी, उन्होंने उनकी याचिका को खारिज कर दिया। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने दिनांक 29.08.2008 के अपने आदेश के द्वारा वादी की बहाली का निर्देश दिया, जिसे उच्चतम न्यायालय ने वि.अनु.या. सं. 27702/2008 *"भारत संघ बनाम महावीर सी. सिंघवी"* में दिनांक 29.07.2010 के अपने आदेश द्वारा बरकरार रखा। यह तर्क दिया गया कि प्रतिवादी *"हिंदुस्तान टाइम्स"* और *"हिंदुस्तान"* के हिंदी संस्करण में लेख के प्रकाशन को स्वीकार करता है। यह दावा किया गया है कि उक्त लेखों में किसी महिला से विवाह से इनकार करने के कारण उसे नौकरी से निकाले जाने की बात बिना किसी आधार के कही गई है तथा उसमें उनका नाम उजागर कर दिया गया है। टेप की बातचीत के आधार पर एक और लेख भी प्रकाशित हुआ, लेकिन गलत रिपोर्टिंग से वादी को हुए नुकसान और क्षति के लिए कोई माफी नहीं मांगी गई। वादी ने प्रतिवादीगण से माफी मांगने के लिए दिनांक 22.01.2003, 10.04.2003 और 20.06.2003 को तीन नोटिस जारी किए थे, जिस पर वे नहीं आए। वादी द्वारा यह प्रस्तुत किया गया कि प्रतिवादीगण द्वारा यह गलत तरीके से कहा गया कि लेख का आधार, प्रतिवादीगण द्वारा सी.ए.टी. के समक्ष दायर किया गया जवाब था।

21. **लिखित प्रस्तुतियों में,** वादी ने तर्क दिया है कि लेखों में कई मानहानिकारक तथ्यों का उल्लेख किया गया है, एक मनगढ़ंत कहानी, जिसमें कोई सच्चाई नहीं है। इसके अलावा, जब किसी व्यक्ति से संबंधित मानहानिकारक तथ्य समाचारपत्र में प्रकाशित होते हैं, तो उस समाचारपत्र के लेखक, संपादक और प्रकाशक को यह साबित करना होता है कि जो मानहानिकारक तथ्य प्रकाशित किए गए थे, वे पूरी तरह से सच थे। *'सेवकराम सोभानी बनाम आर. के. करंजिया'* (1981) 3 एस.सी.सी. 208 पर भरोसा किया गया है।

22. इसके अलावा, आरोप लगाने वाले व्यक्ति का इरादा महत्वहीन है क्योंकि विधि की द्वेष की उपधारणा असत्य और मानहानिकारक है जिसके लिए *''मेजर जनरल एम. एस. अहलूवालिया बनाम तहलका.कॉम और अन्य''* 2023 डीएचसी 5073 पर भरोसा किया गया है।

23. यह प्रस्तुत किया गया कि प्रतिवादीगण द्वारा पेश किया गया बचाव कि उन्होंने उस जानकारी को प्रकाशित और प्रसारित किया था, जो उन्हें वादी को सेवा से बर्खास्तगी के बाद एक स्रोत से प्राप्त हुई थी, उनको कोई सहायता नहीं करती है। बर्खास्तगी आदेश का अवलोकन दर्शाता है कि वादी पर कोई आरोप नहीं था। विदेश मंत्रालय, जहाँ वादी कार्यरत था, ने प्रतिवादीगण को कोई भी जानकारी देने से स्पष्ट रूप से इनकार किया है, जैसा कि उनके द्वारा समाचार पत्रों में प्रकाशित किया गया था। समाचार लेखों के लेखक (प्रतिवादी संख्या 3)

और "हिंदुस्तान टाइम्स" और "हिंदुस्तान" समाचार पत्रों दोनों के संपादक (प्रतिवादी संख्या 2) दोनों ने वर्तमान मामले में गवाही नहीं दी है और न ही उन्होंने किसी भी शपथ पत्र के द्वारा अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया है। दोनों समाचार पत्रों के संपादकों ने भी कोई लिखित बयान दाखिल नहीं किया है। प्रतिवादीगण के बचाव में केवल प्रकाशक/प्र.सा.-1 ने गवाही दिया है। प्र.सा.-1 ने अपनी प्रति-परीक्षा में स्वीकार किया है कि उन्होंने व्यक्तिगत रूप से सूचना के स्रोत की प्रामाणिकता और विश्वसनीयता की पुष्टि नहीं की, जिसके आधार पर लेख प्रकाशित किए गए थे। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि उन्होंने न तो कथित टेप देखे थे और न ही सुने थे, जिसमें वादी और किसी महिला के बीच कथित बातचीत हुई थी और न ही उनके पास वे टेप थे। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि श्री पी.एल. गोयल की कथित पूछताछ रिपोर्ट और मंत्री का आदेश उनके पास उपलब्ध नहीं था। यह तर्क दिया गया कि प्रतिवादीगण में से कोई भी कथित टेप और अपमानजनक, आपत्तिजनक बातचीत की अनुलिपि को प्रस्तुत या साबित करने में समर्थ नहीं है जैसा कि मानहानिकारक समाचार लेखों में दावा किया गया है। वे यह नहीं साबित कर पाए हैं कि *"वादी को कोई महिला ने शादी से इनकार कर दिया गया था, जिसके कारण वादी उसे परेशान कर रहा था और किसी केंद्रीय मंत्री के हस्तक्षेप के बाद, वादी को निलंबित कर दिया गया था।"*

24. यह भी प्रस्तुत किया गया कि दिनांक 30.08.2002 को समाचारपत्र 'हिंदुस्तान टाइम्स' में प्रकाशित लेख, जिसका शीर्षक था *"विदेश कार्यालय परिवीक्षाधीन की बर्खास्तगी को लेकर असमंजस में है"*, सी.ए.टी. के **बर्खास्तगी** आदेश के बाद प्रकाशित हुआ था, जिसमें कहा गया था कि *"इस मामले में सच्चाई कोई नहीं जानता"*। यह दावा किया गया कि दिनांक 30.08.2002 के लेख में मानहानिकारक आरोपों का खंडन नहीं है जैसा कि वादी के खिलाफ प्रकाशित लेख में आरोप लगाया गया था और न ही इसमें कोई माफी मांगी गई है।

25. प्रतिवादीगण ने मू.अ. सं. 2038/2002 में सी.ए.टी. के समक्ष भारत संघ के दिनांक 18.10.2002 के जवाबी हलफनामे पर भरोसा किया, जो निस्संदेह मानहानिकारक समाचार लेख के प्रकाशन के तीन महीने बाद आया और प्रतिवादीगण को कोई सहायता नहीं की, क्योंकि यह समाचार लेखों में लिखे और प्रकाशित मानहानिकारक तथ्यों की सच्चाई को साबित नहीं करता है। इसके अलावा, यह जवाबी हलफनामा साक्ष्य के दौरान, विधि के अनुसार साबित नहीं हुआ है। *मलय कुमार गांगुली बनाम सुकुमार मुखर्जी और अन्य* (2009) 9 एस.सी.सी. 221, पर भरोसा किया गया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि कोई दस्तावेज साक्ष्य में तब तक अस्वीकार्य हो जाता है जब तक कि उसके लेखक की जाँच नहीं की जाती है। '*अक्षय कुमार बोस बनाम सुकुमार दत्ता',* ए.आई.आर. 1951 कलकत्ता 321, *"सीतापति बनाम वेंकन्ना,* ए.आई.आर. 1992

मद्रा. (एफ.बी.)", "*गुलाब चंद बनाम शिव करण लाल,*" ए.आई.आर. 1964 पट. 45, "*लक्षण चंद्र बनाम तकीम धाली",* ए.आई.आर. 1924 कल. 558, *"मनबोध बनाम हिरासाई",* ए.आई.आर. 1926 नाग. 339, *"तारकेश्वर प्रसाद बनाम देवेंद्र प्रसाद",* ए.आई.आर. 1926 पट. 180 पर भी भरोसा किया गया है।

26. वादी ने आगे प्रस्तुत किया है कि उच्चतम न्यायालय ने अपने वि.अनु.या. सं. 27702/2008 शीर्षक *'भारत संघ बनाम महावीर सी. सिंघवी'* में दिनांक 29.07.2010 के अपने निर्णय में, न केवल वादी के दिनांक 13.06.2002 के बर्खास्तगी के आदेश को रद्द कर दिया, बल्कि यह भी टिप्पणी किया की कि गई जाँच के आधार पर प्रतिवादी के खिलाफ कुछ भी नहीं पाया गया और मंत्रालय में जिम्मेदार अधिकारी द्वारा की गई टिप्पणियों का समर्थन करने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं थी, जो स्पष्ट रूप से प्रतिवादी के खिलाफ संबंधित अधिकारियों के पूर्वाग्रह प्रकट करता है। यह तर्क दिया गया कि प्रतिवादी में *सद्भावना और सम्यक सतकर्ता एवं सावधानी की पूर्ण कमी* थी जैसा कि इन तथ्यों से भी स्पष्ट है कि लेखों को प्रकाशन-पूर्व सत्यापन के संबंध में भारतीय प्रेस परिषद द्वारा जारी मानदंडों की पूरी तरह से अवहेलना करते हुए प्रकाशित किया गया था। इसके अलावा, बार-बार नोटिस देने के बावजूद प्रतिवादी उन्हें जवाब देने में विफल रहे। मानहानिकारक लेखों के तरीके और शब्दों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि उनका उद्देश्य कलंकित करना और पाठकों को अश्लील सामग्री प्रदान करना था।

27. हर्जाने की राशि और उस पर ब्याज की मात्रा निर्धारित करने के उद्देश्य से वादी ने *मेजर जनरल एम. एस. अहलूवालिया* (पूर्वोक्त) पर भरोसा किया है। वादी ने अपने दावे के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों पर भी भरोसा किया है: *भारत संघ एवं अन्य बनाम महावीर सी. सिंघवी*" (2010) 8 एस.सी.सी. 220; "*सेवकराम सोभानी बनाम आर.के. करंजिया मुख्य संपादक साप्ताहिक ब्लिट्ज़ का और अन्य*" (1981) 3 एस.सी.सी. 208; "*राजीव अग्रवाल बनाम विजय कुमार दिवाकर और अन्य*" 2011 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्. 4399; "*मलय कुमार गांगुली बनाम सुकुमार मुखर्जी और अन्य*" (2009) 9 एस.सी.सी. 221; "*कॉलिन डोड्स बनाम माइकल मैकडोनाल्ड*" 2016 (वी.सी.एस.) 201; "*राकेश शर्मा और अन्य बनाम महावीर सिंघवी*" 2008 डीएचसी 1938; "*राकेश शर्मा और अन्य बनाम महावीर सिंघवी*", 2010 का आप.अ. 305-07/ 2010 (उच्चतम न्यायालय); *"मेजर जनरल एम.एस. अहलूवालिया बनाम तहलका.कॉम और अन्य*", 2023 डीएचसी 5073; *"राधेश्याम तिवारी बनाम एकनाथ दीनाजी भिवापुरकर"*, ए.आई.आर. 1985 बम. 285; *"एस.एन.एम. अब्दी बनाम प्रफुल्ल कुमार महंत और अन्य*", ए.आई.आर. 2002 गुवा. 75 और "*गुलाब चंद और अन्य बनाम शिव करण लाल सेठ और अन्य*", ए.आई.आर. 1964 पट. 45।

28. *प्रतिवादीगण ने अपनी लिखित दलीलों में इसका जोरदार खंडन किया* कि वर्तमान वाद में आक्षेपित लेख झूठे तथ्यों पर आधारित थे। यह दावा किया गया कि उसने केवल प्राधिकारियों से प्राप्त जानकारी की ही रिपोर्ट की थी। लेख

गोपनीय स्रोत से प्राप्त जानकारी पर आधारित थे और सम्यक रूप से सत्यापित किए गए थे। स्रोत गोपनीय होने के कारण, प्रतिवादीगण द्वारा इसका खुलासा नहीं किया जा सकता है। यह भी तर्क दिया गया कि रिपोर्टिंग सद्भावनापूर्वक, उचित परिश्रम करने के बाद और बिना किसी दुर्भावना के की गई थी। यह भी प्रस्तुत किया गया कि समाचार लेखों की सच्चाई, मू.अ. सं. 2038/2002 में भारत संघ के दायर जवाब से पूरी तरह से पुष्ट होती है। इसके अलावा, यह लेख जनहित में प्रकाशित किया गया था। इसमें आगे तर्क दिया गया कि महिला द्वारा की गई शिकायत में उसने वादी द्वारा उसे की गई लगभग एक हजार कॉलों का उल्लेख किया था तथा उसने सी.डी.आर. की लिखित प्रतिलिपि (ट्रांसक्रिप्ट) के साथ-साथ कैसेट भी पेश किए। महिला द्वारा बहुत सारे पत्र भी प्रस्तुत किए गए, जो उसे वादी द्वारा लिखे गए थे। यह सिद्ध हो चुका है कि दिनांक 18.02.2002 को कार्य दिवस होने के बावजूद वादी अपने कार्यालय में उपस्थित नहीं था। वादी के आचरण के कारण ही उसे सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था।

29. ***वादी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्युत्तर तर्कों*** में प्रस्तुत किया है कि प्रतिवादी दिनांक 18.10.2002 के प्रति-दावा के आधार पर अपनी लेखों की सच्चाई का दावा कर रहे हैं। यह भी प्रस्तुत किया गया कि *भारत संघ बनाम महावीर सी. सिंघवी (पूर्वोक्त),* में उच्चतम न्यायालय ने दिनांक 29.07.2010 के अपने निर्णय में विभिन्न लेखों में वादी के पक्ष में टिप्पणी की

है। यह भी देखा गया है कि शिकायतकर्ता को बिना किसी जाँच के बर्खास्त कर दिया गया था। इसलिए, यह प्रस्तुत किया गया कि समाचारपत्र में प्रकाशित लेख स्पष्ट रूप से दुर्भावनापूर्ण थे और वादी दावा किए गए नुकसान का हकदार है।

30. **प्रस्तुतियाँ सुनी गईं।** दस्तावेजों और साक्ष्यों का अवलोकन किया गया।

31. मेरे **मुद्देवार निष्कर्ष** इस प्रकार हैं:-

मुद्दा संख्या 1: ***क्या "हिंदुस्तान" में प्रकाशित 21 जुलाई, 2002 के समाचार लेख ने वादी को बदनाम किया है, यदि हाँ, तो किस प्रकार से? वादी पर साबित करने का भार है।***

32. वादी ने यह वाद एक गरीब व्यक्ति के रूप में दायर किया था और उसे न्यायालय फ़ीस दाखिल करने से छूट दी गई थी। इसे दिनांक 25.09.2007 के आदेश के द्वारा वाद में परिवर्तित कर दिया गया था।

33. इससे पहले कि हम इस बात पर विचार करें कि क्या वादी को बदनाम किया गया था, पहले *"मानहानि"* और *"प्रतिष्ठा"* की अवधारणा को समझना महत्वपूर्ण होगा।

<u>परिभाषा: मानहानि</u>

34. **चैम्बर्स ट्वेंटिएथ सेंचुरी डिक्शनरी** के अनुसार, मानहानि का अर्थ है ख्याति, प्रसिद्धि या प्रतिष्ठा को छीनना या नष्ट करना; *बुरा बोलना; झूठा आरोप लगाना या बदनाम करना।*

35. लॉ ऑफ़ टॉर्ट्स **सैल्मंड और ह्यूस्टन**, 20वां संस्करण.7 में मानहानिकारक कथन को इस प्रकार परिभाषित किया गया है:-

> *"मानहानिकारक कथन वह होता है जिसमें उस व्यक्ति की **प्रतिष्ठा को चोट पहुँचाने** की प्रवृत्ति होती है जिसको वह संदर्भित करता है; अर्थात, **समाज के सही सोच वाले सदस्यों** के बीच उसे सामान्य रूप से **नीचा दिखाने** और विशेष रूप से उसके प्रति घृणा, अवमानना, उपहास, भय, नापसंदगी या अनादर की भावनाएँ जगाने का प्रयास करता है। कथन का मूल्यांकन समाज के किसी भी सामान्य, सही सोच वाले सदस्य के मानक के आधार पर किया जाता है..."*

36. **हैल्सबरीज़ लॉज़ ऑफ़ इंग्लैंड**, चौथा संस्करण, वॉल्यूम 28, 'मानहानिकारक कथन' को निम्नानुसार परिभाषित करता हैः-

> *"अपमानजनक कथन वह कथन है जो **किसी व्यक्ति को समाज के सही सोच वाले सदस्यों के समक्ष निम्नतर आंकता है** या **उसे तिरस्कृत या उपेक्षित करता है या उसे घृणा, अवमानना या उपहास का पात्र बनाता है** या उसके पद, पेशे, व्यापार या कारोबार में उसके प्रति अपमानजनक या हानिकारक आरोप लगाता है।"*

37. सरल शब्दों में कहें तो, **मानहानि** को "किसी व्यक्ति के बारे में उसकी प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचाने वाले झूठे कथन" के रूप में परिभाषित किया

गया है, जिसे **न्यायमूर्ति केव** ने *स्कॉट बनाम सैम्पसन* क्यू.बी.डी. 1882 के मामले में परिभाषित किया था और भारतीय न्यायालयों द्वारा *बाटा इंडिया लिमिटेड बनाम ए.एम. तुराज एवं अन्य* 2013 (53) पी.टी.सी. 586 और *पांडे सुरेन्द्र नाथ सिन्हा बनाम बागेश्वरी पंडित* ए.आई.आर. 1961 पट. 164 (1882) क्यू.बी.डी. 491 में लागू किया गया था।

38. *चरणजीत सिंह बनाम अरुण पुरी* आई.एल.आर. (1982) दिल्ली 953 में मानहानि का सार बिना किसी औचित्य के किसी अन्य व्यक्ति के बारे में झूठे बयान का प्रकाशन बताया गया है। इसमें विशेषाधिकार, निष्पक्ष टिप्पणी, सहमति आदि का बचाव हो सकता है।

39. *"मानहानि"* का आंतरिक पहलू *"प्रतिष्ठा"* को नुकसान पहुंचाना या लोकाधिकारी क्षेत्र में किसी व्यक्ति के सम्मान को कम करना है। इससे यह समझना उचित हो जाता है कि "प्रतिष्ठा" क्या होती है।

परिभाषा: प्रतिष्ठा

40. "प्रतिष्ठा" के लिए संकेत स्पष्ट रूप से **प्रतिष्ठा** के जन्मजात सार्वभौमिक मूल्य को उजागर करते हैं और कैसे जीवन का यह एक महत्वपूर्ण घटक है और समय द्वारा सीमित या प्रतिबंधित नहीं है, जैसा कि बॉम्बे उच्च न्यायालय ने *मनीषा कोइराला बनाम शशि लाल नायर और अन्य* 2003 (2) बम. सी.आर. 136 के मामले में कहा है।

41. प्रतिष्ठा की अवधारणा को समझने के लिए चरित्र और प्रतिष्ठा के बीच के अंतर पर जोर देने की आवश्यकता है क्योंकि *विधि का उद्देश्य प्रतिष्ठा की रक्षा करना है चरित्र की नहीं।* चरित्र वह है जो कोई व्यक्ति वास्तव में है; *प्रतिष्ठा* वह है जो वह प्रतीत होता है। व्यक्ति उन सिद्धांतों और उद्देश्यों के योग से बना होता है जो उसके आचरण को नियंत्रित करते हैं। प्रतिष्ठा उसके आचरण के अवलोकन का परिणाम है, जो दूसरों द्वारा उस पर आरोपित किया गया चरित्र है। अपने महत्वपूर्ण पहलू में प्रतिष्ठा का अधिकार, प्रसिद्धि या विशिष्टता से संबंधित नहीं है। इसका संबंध बौद्धिक या अन्य विशेष उपलब्धियों से नहीं है, *बल्कि उस प्रतिष्ठा से है जो ईमानदारी, सम्मानजनक आचरण और सही जीवन शैली द्वारा धीरे-धीरे निर्मित होती है।* इसलिए, किसी की प्रतिष्ठा, किसी भी भौतिक संपत्ति की तरह, वास्तव में उसके प्रयासों का परिणाम है; वास्तव में, केवल यही भौतिक संपत्ति को खुशी के स्रोत के रूप में मूल्य प्रदान करता है। *इसलिए, केवल प्रतिष्ठा ही आलोचनीय है; चरित्र को किसी आकस्मिक सहारे की आवश्यकता नहीं होती है।*

42. ***किंक्ड ऑन टॉर्ट्स, i, 759*** में चरित्र और प्रतिष्ठा के बीच के अंतर को संक्षेप में बताया गया है। यह देखा गया कि वे समानार्थी नहीं हैं, बल्कि वे एक दूसरे के प्रत्यक्षतः विपरीत हो सकते हैं। किसी व्यक्ति का चरित्र अच्छा हो सकता है और प्रतिष्ठा खराब हो सकती है, जिसके कारण

जनता उसके बारे में गलत राय बनाती है; या उसका चरित्र बुरा हो सकता है और प्रतिष्ठा अच्छी हो सकती है, जिसके कारण जनता में उसकी छवि गलत हो सकती है। ज्यादातर मामलों में, प्रतिष्ठा वास्तविक चरित्र को दर्शाती है। चूँकि अधिकार का केवल वहाँ तक सम्मान होता है जहाँ तक वह अच्छी तरह से स्थापित है, यह स्पष्ट रूप से किसी सच्चे आरोप द्वारा उल्लंघन नहीं किया गया है। *परन्तु विधि किसी भी अपमानजनक आरोप को गलत मानता है, जब तक यह सच साबित न हो जाए।* इसके अलावा, जबकि विधि को इस उपधारणा को दूर करने के लिए एक निश्चित स्तर के प्रमाण की आवश्यकता होती है, यह मामूली साक्ष्य पर बुराई पर विश्वास करने के लिए मानव मन की प्रवृत्ति को भी मान्यता देता है; इसलिए जो प्रतिनिधित्व उस संबंध में जनमत को प्रभावित करते हैं, उन्हें ऐसा माना जाता है।

43. **लॉर्ड डेनिंग** ने चरित्र और प्रतिष्ठा के बीच के अंतर को *प्लेटो फिल्म्स लिमिटेड बनाम स्पाइडेल* (1961) 1 इला. ई.आर. 876 में इस प्रकार समझाया है:

> *"कभी-कभी कहा जाता है कि किसी आदमी का चरित्र वह है जो वह वास्तव में है, जबकि उसकी प्रतिष्ठा वह है जो दूसरे लोग उसके बारे में सोचते हैं। यदि यह वह अर्थ है जिसमें आप शब्दों का उपयोग कर रहे हैं, तो मानहानिकारक कार्रवाई केवल किसी आदमी की प्रतिष्ठा से संबंधित है,*

यानी लोग उसके बारे में क्या सोचते हैं: और यह उसकी प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँचाने के लिए है, यानी दूसरों की नज़र में अपने सम्मान के लिए वह वाद दायर कर सकता है, न कि अपने व्यक्तित्व या स्वभाव को नुकसान पहुँचाने के लिए।

,,

44. *ओम प्रकाश चौटाला बनाम कंवर भान और अन्य* (2014) 5 एस.सी.सी. 417 में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि प्रतिष्ठा मूलतः गुणों का एक शानदार मिश्रण और एकीकरण है जो किसी व्यक्ति को अपने वंश पर गर्व महसूस कराता है और उसे भावी पीढ़ी के लिए विरासत के रूप में देने के लिए संतुष्ट करता है। यह कुलीनता ही है जिसे कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति कभी भी चीन की पूरी चाय या समुद्र के सभी मोतियों के साथ विनिमय नहीं करेगा। जब प्रतिष्ठा को चोट पहुँचती है, तो आदमी अधमरा हो जाता है। यह प्रतिष्ठा ही है जिसे दलितों और विशेषाधिकार प्राप्त लोगों द्वारा समान रूप से संरक्षित किया जाना चाहिए। कोई भी नहीं चाहेगा कि उनकी प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचे और इसे लोकप्रियता के बजाय सम्मान के रूप में माना जाय।

45. *विश्वनाथ अग्रवाल बनाम सरल विश्वनाथ अग्रवाल* (2012) 7 एस.सी.सी. 288, के मामले में भी उच्चतम न्यायालय ने इसी तरह की टिप्पणियां की थीं, जिसमें उसने कहा था कि प्रतिष्ठा न केवल *जीवन का खेवनहार* है, बल्कि जीवन का सबसे शुद्ध खजाना और सबसे कीमती इत्र भी

है। यह वर्तमान के साथ-साथ भावी पीढ़ी के लिए भी राजस्व सृजित करने वाला है।

46. *उमेश कुमार बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य* (2013) 10 एस.सी.सी. 591, में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि अच्छी प्रतिष्ठा व्यक्तिगत सुरक्षा का एक तत्व है और संविधान द्वारा जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति के उपयोग के अधिकार के समान ही संरक्षित किया गया है और इस तरह इसे संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत नागरिक के जीवन के अधिकार के संबंध में एक आवश्यक तत्व माना गया है।

47. *संक्षेप में, कोई भी कथन जो व्यक्ति की प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाने या समाज के सदस्यों की नज़र में उसे नीचा दिखाने की प्रवृत्ति रखता है, जिसके परिणामस्वरूप प्रतिष्ठा का नुकसान होता है और फलतः वह मानहानिकारक होता है।*

48. यह पता लगाने के लिए कि क्या किसी बयान से प्रतिष्ठा की हानि हुई है, विचारणीय प्रश्न यह है कि दूसरे की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाने के *गलत इरादे का अस्तित्व है*, जिसे *"द्वेष"* कहा जा सकता है, और मानहानि स्थापित करने के लिए एक आवश्यक घटक माना जा सकता है।

49. '*द्वेष*' का अर्थ 'दुर्भावना' या द्वेषभाव है जो -वास्तव में या -विधि में हो सकती है। भारतीय संदर्भ में, "वास्तव में द्वेष" और "विधि में द्वेष" के बीच का अंतर विधि की दो शाखाओं यानी सिविल और आपराधिक में स्पष्ट है।

50. भा.दं.सं. की धारा 499, जो आपराधिक मानहानि को परिभाषित करती है, *''वास्तविक द्वेष''* के प्रमाण की बात करती है। *"वास्तविक द्वेष"* तब होता है जब बुरी मंशा किसी जानबूझकर किए गए कार्य में परिवर्तित हो जाती है, जिसका इरादा किसी अन्य व्यक्ति को विधिविरुद्ध तरीके से चोट पहुंचाना होता है जैसा कि पश्चिम बंगाल राज्य विद्युत बोर्ड बनाम दिलीप कुमार रे, (2007) 14 एस.सी.सी. 568 के मामले में समझाया गया है। वास्तविक द्वेष तथ्य का प्रश्न है जिसके लिए विशिष्ट प्रमाण की आवश्यकता होती है।

51. *जेफरी जे. डायरमियर और अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य* (2010) 6 एस.सी.सी. 243 में इस पहलू पर विचार-विमर्श करते हुए कि भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 499 के तहत मानहानि क्या है, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि कोई लांछन अवश्य होना चाहिए और ऐसा लांछन *नुकसान पहुंचाने के इरादे से* लगाया गया होना चाहिए या *यह जानते हुए* या यह विश्वास करने का कारण रखते हुए लगाया गया होना चाहिए कि इससे उस व्यक्ति की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचेगा जिसके बारे में यह लगाया गया है। इस प्रकार, यह दिखाने के लिए पर्याप्त होगा कि अभियुक्त का इरादा था या वह जानता था या उसके पास यह विश्वास करने का कारण था कि उसके द्वारा

लगाए गए आरोप से शिकायतकर्ता की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचेगा, भले ही शिकायतकर्ता को वास्तव में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से आरोप से नुकसान हुआ हो।

52. *सिविल संदर्भ* में मानहानि के विधि में यह प्रावधान है कि दुर्भावना के बिना बोले गए शब्द भी कार्रवाई योग्य हो सकते हैं और ऐसे मामलों में बोलने या प्रकाशन के कार्य में द्वेष निहित होती है। इस तरह की दुर्भावना को "विधिक *द्वेष" या "विधि* में द्वेष" कहा जाता है। बिना किसी विधिक बहाने के मानहानिकारक बातें बोलना इसलिए कहा जाता है, क्योंकि ऐसे शब्द बोले जाते हैं जिनमें विधि के अनुसार दुर्भावना निहित होती है। इस प्रकार, विधिक दुर्भावना एक कल्पना है जो परिस्थितियों में निहित होती है।

53. *एस.आर. वेंकटरमण बनाम भारत संघ,* (1979) 2 एस.सी.सी. 491 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने व्याख्या की कि सिविल कार्यवाही में, वास्तविक दुर्भावनापूर्ण आशय को स्थापित करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि *"विधि में द्वेष"* गलत कार्य करने को मानी जाती है। *शियरर और अन्य बनाम शील्ड*, 1914 ए.सी. 808 में 'विधि में द्वेष' की धारणा के लिए विस्काउंट हाल्डेन के तर्क पर भरोसा किया गया, जो इस प्रकार है:

> *"जो व्यक्ति विधि का उल्लंघन करते हुए किसी अन्य व्यक्ति को चोट पहुँचाता है, उसे यह कहने की अनुमति नहीं है कि उसने निश्छल मन से ऐसा किया है; उसे विधि*

का जानकार माना जाता है, और उसे विधि के भीतर काम करना चाहिए। इसलिए वह विधि में द्वेष का दोषी हो सकता है, हालाँकि, जहाँ तक उसके मन की स्थिति का संबंध है, वह अज्ञानता से और उस अर्थ में निश्छल रूप से कार्य करता है।"

54. इस प्रकार, सिविल कार्यवाही में, आरोप लगाने वाले व्यक्ति का दुर्भावनापूर्ण इरादा मायने नहीं रखता है; जब कोई बयान असत्य होता है और अपनी प्रकृति से ही मानहानिकारक होता है क्योंकि *विधि में दुर्भावना* की उपधारणा होती है।

55. *विधि में दुर्भावना* की उपधारणा को देखते हुए, मानहानि के लिए कार्रवाई करने के लिए चोट की प्रकृति और सीमा पर विचार करने की आवश्यकता है। मूलतः, प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँचाना कार्रवाई का सार है; प्रतिष्ठा के नुकसान का सबूत आवश्यक है क्योंकि कुछ सबूतों के बिना, यह स्पष्ट नहीं होगा कि वास्तव में प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँचा था। लेकिन चोट काफी होनी चाहिए, यानी न्यायालय द्वारा उसका आकलन किया जा सके। इसलिए, केवल अश्लील गाली-गलौज या ऐसे शब्दों के लिए कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती, जिनसे कोई गंभीर चोट नहीं पहुंची हो, जैसा कि उक्ति में कहा गया है: *डी मिनिमस नॉन क्यूरेट लेक्स (विधि छोटे और तुच्छ मामलों पर कार्रवाई नहीं करेगा।)*।

56. इस उक्ति के अनुप्रयोग को चैडॉक बनाम ब्रिग्स, (1816) 13 मास 248 में स्पष्ट किया गया था:

> *"हालाँकि, कुछ शब्द, झूठे और दुर्भावनापूर्ण रूप से बोले जाते हैं, वास्तविक चोट पहुँचाने के प्रकृति के नहीं होते हैं, क्योंकि ये निंदा के सामान्य शब्द होते हैं, तथा वक्ता के स्वभाव को दर्शाते हैं, न कि उसके चरित्र के किसी विशिष्ट दोष को, जिसके बारे में वे बोल रहे हैं, इसलिए यह नहीं माना जा सकता है कि उन्होंने कोई हानिकारक प्रभाव डाला है; और इसलिए ऐसे शब्दों को कार्रवाई का आधार बनाने के लिए यह आरोप लगाना और साबित करना आवश्यक है कि कुछ नुकसान वास्तव में शब्दों के बोलने के बाद हुआ था।"*

57. विचारणीय बिंदुओं को स्पष्ट करने के लिए, न्यायालय को इस बात पर विचार करने की आवश्यकता है कि क्या वाद में किए गए प्रकथन "*विधि में द्वेष*" के दायरे में आते हैं, *अर्थात, क्या यह व्यक्ति की प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाने या समाज के सदस्यों की नज़र में उसे नीचा दिखाने की प्रवृत्ति रखता है, जिसके परिणामस्वरूप प्रतिष्ठा का नुकसान होता है और फलतः वह मानहानिकारक होता है।* इसके लिए दुर्भावनापूर्ण आरोप लगाने वाले व्यक्ति का इरादा मायने नहीं रखता है। इसके अलावा, प्रतिष्ठा के नुकसान पहुँचाने के कुछ सबूत भी आवश्यक हैं। ऐसा न्यायनिर्णयन करते हुए, न्यायालय तुच्छ बातों या अश्लीलता पर ध्यान नहीं दे सकता, जो भले ही अप्रिय हो, *लेकिन अनिवार्यतः उसमें हानिकारक होने की क्षमता का अभाव है।*

अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत बोलने की स्वतंत्रता और प्रतिष्ठा का अधिकार

58. सिविल मानहानि के मूल सिद्धांतों को बताए जाने के बाद, आगे भाषण एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार पर विचार-विमर्श करने की आवश्यकता है जिसे सभी मनुष्यों के मौलिक अधिकार और उन पर सीमाओं के रूप में मान्यता प्राप्त है। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 (यू.डी.एच.आर.) के अनुच्छेद 12 में प्रावधान है कि:

> *"**12.** किसी की निजता, परिवार, घर या पत्राचार में मनमाना हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा और न ही <u>उसके सम्मान और प्रतिष्ठा पर हमला किया जाएगा।</u> हर किसी को इस तरह के हस्तक्षेप या हमलों के खिलाफ कानून की सुरक्षा का अधिकार है।"*

59. *नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय वाचा* **(आई.सी.सी.पी.आर.)** का अनुच्छेद 19 भी स्पष्ट रूप से अभिव्यक्ति के अधिकार को दूसरों के अधिकारों और प्रतिष्ठा के अधीन रखता है। यyह इस प्रकार है:

> **"19.** ***(1)*** *प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी हस्तक्षेप के अपनी राय रखने का अधिकार होगा।*
> ***(2)*** *प्रत्येक व्यक्ति को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार होगा; इस अधिकार में मौखिक रूप से, लिखित रूप में या मुद्रित रूप से, कला के रूप में, या अपनी पसंद के किसी भी अन्य माध्यम द्वारा, सभी प्रकार की जानकारी और विचारों को प्राप्त करने और प्रदान करने की स्वतंत्रता शामिल होगी।*

(3) इस अनुच्छेद के पैरा (2) में दिए गए अधिकारों के प्रयोग के साथ विशेष कर्तव्य और जिम्मेदारियां भी जुड़ी हुई हैं। इसलिए यह कुछ प्रतिबंधों के अधीन हो सकता है, लेकिन ये केवल वही होंगे जो विधि द्वारा प्रदान किए गए हैं और आवश्यक हैं:
(क) दूसरों के अधिकारों या प्रतिष्ठा के सम्मान के लिए;
(ख) राष्ट्रीय सुरक्षा या लोक व्यवस्था (लोक व्यवस्था), या लोक स्वास्थ्य या नैतिकता की सुरक्षा के लिए।

60. *मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं के संरक्षण के लिए यूरोपीय सम्मेलन* **(ई.सी.एच.आर.)** के अनुच्छेद 10 में प्रावधान किया गया है:

*"**10. अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता।**–(1) हर किसी को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार है। इस अधिकार में राय रखने और लोक प्राधिकारियों के हस्तक्षेप के बिना और सीमाओं की परवाह किए बिना जानकारी और विचारों को प्राप्त करने और प्रदान करने की स्वतंत्रता शामिल होगी। यह अनुच्छेद राज्यों को प्रसारण, टेलीविजन या सिनेमा उद्यमों के लाइसेंस की आवश्यकता से नहीं रोकेगा।*
(2) इन स्वतंत्रताओं का प्रयोग, क्योंकि इसके साथ कर्तव्य और जिम्मेदारियां जुड़ी हैं, ऐसी औपचारिकताओं, शर्तों, प्रतिबंधों या दंड के अधीन हो सकता है जो विधि द्वारा निर्धारित हैं और आवश्यक हैं किसी लोकतांत्रिक समाज में, राष्ट्रीय सुरक्षा, क्षेत्रीय अखंडता या लोक सुरक्षा के हित में, अव्यवस्था या अपराध की रोकथाम के लिए, स्वास्थ्य या नैतिकता की सुरक्षा के लिए, दूसरों की प्रतिष्ठा या अधिकारों की सुरक्षा के लिए, विश्वास में प्राप्त जानकारी के प्रकटीकरण को रोकने के लिए, या न्यायपालिका के अधिकार और निष्पक्षता को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं।"

61. ये मानवाधिकार घोषणाएं, वाचाएं और समझौते अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के उद्देश्य को दर्शाते हैं और किसी व्यक्ति के अविभाज्य अधिकार के रूप में प्रतिष्ठा को मान्यता देते हैं। वे बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और प्रतिष्ठा के अधिकार को एक साथ रखते हैं जिससे पहले वाले पर प्रतिबंध हटा दिए जाते हैं और दोनों अधिकारों के बीच संतुलन की आवश्यकता प्रदर्शित होती है।

प्रेस का अधिकार, सूचना का अधिकार और प्रतिष्ठा का अधिकार-अनुच्छेद 19 और अनुच्छेद 21 के तहत अधिकारों को संतुलित करना

62. *प्रतिष्ठा को अनुचित नुकसान पहुंचाने* की अवधारणा के द्वारा, मानहानि कानून, किसी व्यक्ति की अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखने के अधिकार के विरुद्ध अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार को मापते हैं। इसलिए मानहानि कानून के विश्लेषण के लिए बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार, किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा के अधिकार और लोकतांत्रिक समाज में नागरिकों के सूचना के अधिकार की समझ की भी आवश्यकता होती है।

63. *बेनेट कोलमैन एंड कंपनी बनाम भारत संघ,* (1972) 2 एस.सी.सी. 788 में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि प्रेस की स्वतंत्रता का अर्थ है सभी नागरिकों को बोलने, प्रकाशित करने और अपने विचार व्यक्त करने का अधिकार। प्रेस

की स्वतंत्रता में लोगों के पढ़ने और सूचना प्राप्त करने का अधिकार भी सम्मिलित है।

64. आज की स्वतंत्र दुनिया में, प्रेस की स्वतंत्रता सामाजिक और राजनीतिक संबंधों का हृदय है। प्रेस ने अब सार्वजनिक शिक्षक की भूमिका ग्रहण कर ली है, जिससे बड़े पैमाने पर औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा संभव हो रही है, विशेष रूप से विकासशील देशों में, जहां टेलीविजन और अन्य प्रकार के आधुनिक संचार अभी भी समाज के सभी वर्गों के लिए उपलब्ध नहीं हैं। प्रेस का उद्देश्य तथ्यों और विचारों को प्रकाशित करके लोकहित को आगे बढ़ाना है जिसके बिना लोकतांत्रिक मतदाता जिम्मेदार नहीं हो सकता है। *इंडियन एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स (बॉम्बे) (पी) लिमिटेड बनाम भारत संघ,* (1985) 1 एस.सी.सी. 641 में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया।

> "समाचार-पत्र, लोक प्रशासन से संबंधित समाचार और विचार प्रदान करने वाले होते हैं, तथा इनमें प्रायः ऐसी सामग्री होती है, जो सरकारों और अन्य प्राधिकारियों को स्वीकार्य नहीं होती... सूचना के मुक्त प्रवाह में बाधा डालने वाली ऐसी कुप्रथाओं को रोकने के उद्देश्य से, दुनिया भर के लोकतांत्रिक संविधानों में भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की गारंटी देने वाले प्रावधान किए गए हैं, तथा इसमें हस्तक्षेप की सीमाएं भी निर्धारित की गई हैं। इसलिए, सभी न्यायालयों का यह मुख्य कर्तव्य है कि वे उक्त स्वतंत्रता को कायम रखें और संवैधानिक आदेश के विपरीत, इसमें हस्तक्षेप करने वाले सभी कानूनों या प्रशासनिक कार्यों को अमान्य घोषित करें।"

65. *सचिव, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार और अन्य बनाम बंगाल क्रिकेट संघ और अन्य* (1995) 2 एस.सी.सी. 161, यह निर्णय

दिया गया कि वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में सूचना प्राप्त करने और इसे प्रसारित करने का अधिकार भी शामिल है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के महत्व को और स्पष्ट करते हुए, *भारत संघ और अन्य बनाम मोशन पिक्चर एसोसिएशन और अन्य* (1999) 6 एस.सी.सी. 150 मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतांत्रिक समाज की नींव है और विचारों का स्वतंत्र आदान-प्रदान, बिना किसी प्रतिबंध के सूचना का प्रचार-प्रसार, ज्ञान का प्रसार, विभिन्न दृष्टिकोणों का प्रसारण, बहस और अपने स्वयं के विचारों का निर्माण और उन्हें व्यक्त करना, एक स्वतंत्र समाज के मूल संकेत हैं।

66. *ब्लूमबर्ग टेलीविजन प्रोडक्शन सर्विसेज इंडिया प्राइवेट प्राइवेट लिमिटेड बनाम जी एंटरटेनमेंट एंटरप्राइज लिमिटेड* वि.अनु.या. (सि.) सं. 6696/2024 में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि मीडिया प्लेटफार्मों और/या पत्रकारों द्वारा मानहानि से संबंधित वादों में, प्रतिष्ठा और निजता के अधिकार के साथ अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार को संतुलित करने के अतिरिक्त विचार को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

67. विशेष रूप से, अनुच्छेद 19(1)(क) के तहत भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार आत्यन्तिक नहीं है, बल्कि संविधान के अनुच्छेद 19(2) के तहत उचित प्रतिबंधों के अधीन है, जो अनुच्छेद 19(2) के तहत गारंटीकृत

स्वतंत्रता और सामाजिक हितों के बीच उचित संतुलन बनाने के लिए समुदाय के व्यापक हित में शामिल किए गए हैं।

68. जनता को सूचना प्राप्त करने का अधिकार तथा आम जनता तक सूचना पहुंचाना प्रेस का कर्तव्य है, गलत सूचना प्रसारित न करने या समाचार को इस प्रकार प्रस्तुत न करने की सीमा से आबद्ध है जिससे व्यक्तियों की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचे। मीडिया और प्रेस के लिए यह जिम्मेदारी अधिक कठोर है, क्योंकि इसकी पहुंच अधिक है; एक बार कोई चीज प्रकाशित हो जाने के बाद, अब न केवल वह हर समय उपलब्ध रहती है, बल्कि वह उन सभी लोगों तक पहुंच जाती है, जो मीडिया तक पहुंच रखते हैं, जिससे ऐसी क्षति हो सकती है, जो अपूरणीय है। *सुब्रमण्यम स्वामी बनाम भारत संघ,* (2016) 7 एस.सी.सी. 221 उच्चतम न्यायालय ने भा.दं.सं. की धारा 499 के तहत आपराधिक मानहानि के अपराध की संवैधानिकता को बरकरार रखते हुए कहा कि प्रतिष्ठा का अधिकार अनुच्छेद 21 का एक अंतर्निहित पहलू है और किसी के अधिकार का प्रयोग इस तरह से किया जाना चाहिए कि उसका दूसरे नागरिक के अधिकार के साथ सीधा टकराव न हो।

प्रेस द्वारा सूचना की रिपोर्टिंग

69. व्यापक और सही जानकारी प्रदान करना प्रेस का मुख्य कार्य है, विशेष रूप से जब इसे लोकाधिकारी क्षेत्र में लाया जाता है। सच्ची और विश्वसनीय रिपोर्टिंग के बारे में मानहानि की कार्रवाई लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए

अस्वस्थ्यकर है, जैसा कि बॉम्बे उच्च न्यायालय ने *विजय बनाम रवींद्र घिसुलाल गुप्ता* आप.आ. सं. 393/2022 के मामले में कहा था।

70. *आर. राजगोपाल बनाम तमिलनाडु राज्य* (1994) 6 एस.सी.सी. 632 में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि न्यायालय के अभिलेखों सहित सार्वजनिक अभिलेखों पर आधारित कोई भी प्रकाशन आपत्तिजनक नहीं है क्योंकि यह प्रेस और मीडिया द्वारा टिप्पणी के लिए एक वैध विषय बन जाता है। आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह प्रेस या मीडिया के सदस्यों के लिए यह साबित करना पर्याप्त होगा कि *उन्होंने तथ्यों के उचित सत्यापन के बाद ही कार्रवाई की;* प्रेस के लिए यह साबित करना आवश्यक नहीं है कि जो लिखा गया है वह सच है।

71. इसके अलावा *जवाहरलाल दर्डा और अन्य बनाम मनोहरराव गणपतराव कापसीकर और अन्य,* (1998) 4 एस.सी.सी. 112 में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि अभियुक्त *ने विवरण को सच मानते हुए*, रिपोर्ट को सद्भावना से प्रकाशित किया, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि उनका इरादा शिकायतकर्ता की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँचाना था।

72. *वीर अर्जुन न्यूजपेपर प्राइवेट लिमिटेड बनाम बहोरी लाल*, 2013 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्. 5096 में इस न्यायालय की समन्वय न्यायपीठ ने कहा कि प्रकाशन की गतिविधि के हिस्से के रूप में तथ्यात्मक मामलों पर

रिपोर्टिंग करते समय, समाचार पत्रों पर मानहानि के परिणामों के दायित्व का बोझ नहीं डाला जा सकता है। यदि इसे अन्यथा माना जाता, तो इसका परिणाम यह होता कि सरकारी अधिकारी के विरुद्ध आरंभ की गई अनुशासनिक कार्यवाही के केवल अंतिम परिणामों की रिपोर्टिंग की जाती और इससे आम जनता/समाचारपत्र के संरक्षकों को उनके विरुद्ध की गई शिकायतों के बारे में किसी भी समाचार से वंचित होना पड़ता।

73. *रुस्तम करंजिया और अन्य बनाम वी. कृष्णराज एम.डी. ठाकरे और अन्य,* ए.आई.आर. 1970 बम. 424 में यह कहा गया कि पत्रकार को जनहित से संबंधित किसी भी विवाद पर निष्पक्ष टिप्पणी करने का अधिकार है। हालाँकि, यह सुनिश्चित करना उनका कर्तव्य है कि दावा किए गए तथ्य सटीक और सच्चे हों, चाहे वे कितने भी मानहानिकारक क्यों न लगें। किसी पत्रकार द्वारा किए गए ऐसे कृत्य के परिणामों को देखते हुए, जाँच करने वाले व्यक्ति या संगठन को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि यदि तथ्यों को चुनौती दी जाती है तो वे उन्हें साबित करने की स्थिति में हैं। *जनहित तभी पूरा होगा जब जाँच में ईमानदारी होगी।* इसके अलावा, यह साबित करने के लिए सबूत का भार प्रकाशन पर है कि उनके द्वारा किए गए दावे उचित हैं और इस प्रकार, यह एक उचित टिप्पणी है जैसा कि *द एडिटर, राष्ट्र दीपिका लिमिटेड और अन्य बनाम विनय एन.ए.*, आई.एल.आर. 2017 (3) केरल 456 के मामले में अभिनिर्धारित किया गया है।

राम जेठमलानी बनाम सुब्रमण्यम स्वामी, 126 (2006) डी.एल.टी. 535 के मामले में **उच्चतम न्यायालय द्वारा मानहानि के बचाव को संक्षिप्त और स्पष्ट रूप से समझाया गया था**। मानहानि को सार्वजनिक संसूचना के रूप में परिभाषित करते हुए, जो दूसरे की प्रतिष्ठा को चोट पहुँचाता है, न्यायालय ने समझाया कि मानहानि के वाद में उपलब्ध बचाव सत्य, निष्पक्ष टिप्पणी और विशेषाधिकार के होते हैं। यह निम्नानुसार निर्दिष्ट करता है:

> *"मानहानि की कार्रवाई के लिए **पारंपरिक बचाव** अब काफी स्पष्ट हो गए हैं और ये **3 भागों में विभाजित किये जा सकते हैं: सत्य, निष्पक्ष टिप्पणी और विशेषाधिकार। सत्य, या न्यायोचित,** पूर्ण बचाव है। सत्य के प्रमाण का मानक आत्यंतिक नहीं है, बल्कि यह स्थापित करने तक सीमित है कि जो कहा गया है **वह 'काफी हद तक सही' था। निष्पक्ष टिप्पणी विचारों की अभिव्यक्ति के लिए सुरक्षा प्रदान करती है**। सबूत का मानक यह नहीं है कि न्यायालय को राय से सहमत होना पड़ेगा, बल्कि यह निर्धारित करने तक सीमित है कि क्या उस समय ज्ञात तथ्यों पर किसी निष्पक्ष व्यक्ति द्वारा ईमानदारी से विचार रखे जा सकते थे। सत्य के बचाव के विपरीत, निष्पक्ष टिप्पणी पर आधारित बचाव को पराजित किया जा सकता है यदि वादी यह साबित करता है कि मानहानिकर्ता ने द्वेष के साथ काम किया है। **विशेषाधिकार लोक हित के लिए की गई अभिव्यक्ति की रक्षा के लिए बनाया गया है।** यदि वास्तविक दुर्भावना स्थापित हो जाती है तो योग्य विशेषाधिकार की सुरक्षा समाप्त हो जाती है। जनहित में, पूर्ण विशेषाधिकार एक पूर्ण बचाव है। न्यायालय की कार्यवाही या अधिकरणों के समक्ष*

कार्यवाही तक पूर्ण विशेषाधिकार को सीमित करने का औचित्य यह है कि यदि मानहानि के वादों का खतरा अधिवक्ताओं, वादियों, गवाहों, न्यायाधीशों और सांसदों के सिर पर मंडराता है तो इससे वे स्वतंत्र रूप से बोलने से वंचित हो जाएंगे और जनहित को नुकसान पहुंचेगा।"

74. ***संक्षेप* में, मानहानि के** सिविल विधि के प्रमुख तत्व इस प्रकार हैं: (i) वादी को घृणा, उपहास या अवमानना के लिए उजागर करने वाले *बयान* (पीड़ित वादी के संबंध में) *का प्रकाशन* या जिससे उसे दूर रखा जाता है या टाल दिया जाता है या जो उसके कार्यालय, पेशे या बुलाने में उसे चोट पहुँचाने की प्रवृत्ति रखता है; (ii) वादी की प्रतिष्ठा को *पहुंची हानि* महत्वपूर्ण है, न कि प्रतिवादी की मंशा; प्रतिवादी का वादी को बदनाम करने का कोई इरादा नहीं था, यह बात अप्रासंगिक है; (iii) बयान प्रतिवादी द्वारा किसी *तीसरे व्यक्ति* को *प्रकाशित किया जाना चाहिए*; और (iv) बयान *गलत होना चाहिए।* विशेष रूप से समाचारपत्र प्रकाशनों के संदर्भ में **उपलब्ध बचाव** एक सच्चा बयान है, लोक हित के लिए निष्पक्ष टिप्पणी और विशेषाधिकार प्राप्त बयान सिविल दायित्व को आकर्षित नहीं कर सकते हैं।

75. मानहानि की रूपरेखा और उपलब्ध बचाव की चर्चा के आलोक में, इस मामले के तथ्यों की अब जाँच की जा सकती है।

<u>विश्लेषण और निष्कर्ष:</u>

76. स्वीकार किए गए तथ्य यह हैं कि वादी जो अपने छात्र जीवन में विभिन्न पदक और पुरस्कार जीतने वाले एक प्रतिष्ठित विद्वान हैं, वर्ष 1999 में यू.पी.एस.सी. परीक्षा में चुने गए और उन्हें भारतीय विदेश सेवा में नियुक्त किया गया। उनका भारतीय विदेश सेवा में विनियोजन और नियुक्ति प्र.अभि.सा./16 और 1/17 है। उन्होंने 20.09.1999 को लाल बहादुर की शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी में प्रवेश लिया और प्रशिक्षण के दौरान उनके आचरण और प्रदर्शन की काफी सराहना की गई। उन्हें जारी किया गया प्रशंसा पत्र और प्रमाण पत्र क्रमशः प्र.अभि.सा./18 और 1/19 हैं। वादी को 13.06.2002 को बर्खास्त/सेवामुक्त कर दिया गया था, जबकि वह परिवीक्षा पर था, दिनांक 13.06.2002 के पत्र प्र.अभि.सा. 1/20 के अनुसार, जिसमें साफ-साफ लिखा गया था:

> *"राष्ट्रपति महोदय श्री महावीर सिंघवी, आई.पी.एस. परिवीक्षाधीन (1999 बैच) को आदेश संख्या क्यू/पी.ए.-11/578/32/99 दिनांक 21 सितम्बर, 1999 द्वारा जारी रोजगार शर्तों के अनुसार सेवा से तत्काल मुक्त करते हैं।"*

77. इस प्रकार, वादी के अपमान के दिन शुरू हुए। हिन्दुस्तान टाइम्स में "टेप से 'दुर्व्यवहार' साबित होने के बाद परिवीक्षाधीन आई.एफ.एस. को बर्खास्त किया गया" शीर्षक से 18.07.2002 को लेख छपा था। उक्त समाचारपत्र की कतरन इस प्रकार थी:

*"**परिवीक्षाधीन आई.एफ.एस. को टेपों से दुर्व्यवहार साबित होने के बाद बर्खास्त किया गया,** जहां तहलका टेपों ने रक्षा मंत्रालय को हिलाकर रख दिया, वहीं आपत्तिजनक टेपों का एक और सेट अब साउथ ब्लॉक के दूसरी तरफ - विदेश मंत्रालय को हिलाकर रख रहा है। और अब वे अपना असर दिखाना शुरू कर चुके हैं: विदेश मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों ने टेप में मौजूद बातचीत के आधार पर एक परिवीक्षाधीन आई.एफ.एस. को दुर्व्यवहार के आरोप में बर्खास्त कर दिया है। सूत्रों का कहना है कि यह पहली बार है जब किसी परिवीक्षाधीन आई.एफ.एस. को दुर्व्यवहार के लिए बर्खास्त किया गया है। ये टेप साबित करते हैं कि 1999 बैच के महावीर सिंघवी ने एक महिला के साथ आपत्तिजनक बातचीत की थी।*

जाहिर है, टेपों को तत्कालीन विदेश मंत्री जसवंत सिंह ने भी सुना था, जिन्होंने परिवीक्षाधीन को तुरंत बर्खास्त करने का आदेश दिया था।

आई.एफ.एस. आचरण नियमों के अनुसार, परिवीक्षाधीन को बिना किसी सूचना के बर्खास्त किया जा सकता है। हालाँकि, इस मामले में, तब के तत्कालीन अवर सचिव (प्रशासन) पी.एल. गोयल द्वारा जाँच शुरू की गई थी। लेकिन एक बार जब मंत्री ने आदेश पारित कर दिया, तो अधिकारी के खिलाफ तुरंत कार्रवाई की गई।

साउथ ब्लॉक के सूत्रों का कहना है कि हालांकि सिंघवी की विदेश में पोस्टिंग होनी थी, जिसमें कथित तौर पर गाली-गलौज और अपशब्दों का प्रयोग किया गया था, इतनी दोषपूर्ण थी कि उनके खिलाफ कठोर कार्रवाई अपरिहार्य थी। उन्होंने कहा कि इस बर्खास्तगी से विदेश विभाग में एक कड़ा संदेश गया है: दुर्व्यवहार बर्दाश्त नहीं किया जाएगा।

> ***हालाँकि, कई अधिकारियों को लगता है कि पूरे मामले से दोहरे मानदंडों की बू आ रही है।*** *वे स्वीकार करते हैं कि परिवीक्षाधीन के खिलाफ कार्रवाई की जानी चाहिए थी, लेकिन उनका कहना है कि तत्कालीन विदेश सचिव कोकिला अय्यर को सौंपी गई एक और टेप जिसमें इस्तांबुल में "महावाणिज्य दूत आर.पी. सिंह के आचरण के बारे में खुलासे" हैं, उसे दबा दिया गया। एक सूत्र ने कहा कि इसके बजाय, उन्हें विदेश विभाग के प्रशासन विभाग में एक वरिष्ठ अधिकारी के साथ उनकी निकटता के कारण पुरस्कृत किया गया है।*
>
> *टेप में कथित तौर पर आरोप लगाया गया है कि आर.पी. सिंह ने इस्तांबुल में भारतीय वाणिज्य दूतावास की एक स्थानीय महिला कर्मचारी के साथ दुर्व्यवहार किया।*
>
> *विदेश विभाग के पुराने अधिकारीयों को लगता है कि नई टीम को उन अधिकारियों पर कड़ी कार्रवाई करनी होगी जो विदेश मंत्रालय की छवि को खराब करते हैं और अक्सर कुछ प्रमुख अधिकारियों के संरक्षण के कारण बच निकलते हैं।''*

78. इस लेख को इस कसौटी पर जाँच करने की आवश्यकता है कि **क्या यह झूठ है, प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाने के इरादे से लिखा गया है या सरकारी अभिलेख के आधार पर सद्भावनापूर्वक लिखा गया है।**

79. समाचारपत्र की रिपोर्ट में कहा गया है कि विदेश मंत्रालय में प्रसारित *टेपों* के एक अन्य सेट ने वादी, एक आई.एफ.एस. परिवीक्षाधीन अधिकारी पर भारी असर डाला है, जिसे उसके दुर्व्यवहार के कारण बर्खास्त कर दिया गया

था, क्योंकि *टेपों से यह साबित हो गया था कि उसने महिला के साथ आपत्तिजनक बातचीत की थी।* लेख में कहा गया है कि इस बर्खास्तगी का कारण स्पष्ट रूप से वे टेप थे जो तत्कालीन विदेश मंत्री ने सुने थे जिन्होंने आई.एफ.एस. को तत्काल हटाने का आदेश दिया था। समाचारपत्र के लेख में उल्लेख किया गया है कि आई.एफ.एस. आचरण नियमों के अनुसार, परिवीक्षाधीन को बिना नोटिस के बर्खास्त किया जा सकता है, लेकिन इस वर्तमान मामले में शुरू में अपर सचिव द्वारा जाँच की गई थी। लेकिन, एक बार जब मंत्री ने आदेश पारित कर दिया, तो अधिकारी के खिलाफ कार्रवाई तुरंत हो गई। समाचार में आगे बताया गया कि हालाँकि वादी को विदेश में पोस्टिंग मिलनी थी, परन्तु टेप में बातचीत इतनी आपत्तिजनक थी कि उसके खिलाफ सख्त कार्रवाई अपरिहार्य हो गई। यह भी कहा गया कि यह कार्रवाई विदेश कार्यालय में एक कड़ा संदेश भेजने के लिए की गई थी कि दुर्व्यवहार बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। इसी तरह की घटना एक अन्य अधिकारी से जुड़ी हुई थी, जिसमें अधिकारी ने इस्तांबुल में वाणिज्य दूतावास में एक स्थानीय महिला कर्मचारी के साथ दुर्व्यवहार किया था, लेकिन यह देखा गया कि ऐसा प्रतीत होता है कि इसे दबा दिया गया था और वरिष्ठ अधिकारियों के साथ उसकी निकटता के कारण उसे पुरस्कृत किया गया था। समाचार लेख का समापन इस टिप्पणी के साथ किया गया कि विदेश मंत्रालय के अधिकारियों को लगता है कि नई टीम को उन अधिकारियों पर सख्ती से कार्रवाई करनी होगी

जो विदेश मंत्रालय की छवि को धूमिल करते हैं और अक्सर कुछ प्रमुख अधिकारियों के संरक्षण के कारण प्रभावित हो जाते हैं।

80. पूरे समाचारपत्र के लेख से, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि यह एक ऐसी घटना की तटस्थ रिपोर्टिंग है जिसमें यह बताया गया है कि एक टेप विदेश मंत्रालय के कार्यालय में प्राप्त हुआ था, जिसमें आपत्तिजनक भाषा थी और जब अतिरिक्त सचिव द्वारा जाँच की जा रही थी, तो मंत्री ने बिना किसी जाँच के वादी को बर्खास्त करने का फैसला किया, क्योंकि वह एक परिवीक्षाधीन अधिकारी था। अनिवार्य रूप से, यह एक सच्चाई है अर्थात तथ्यों का विवरण जो केवल रिपोर्ट किया गया है। तथ्य यह है कि यह वादी की ओर से किसी भी दुर्व्यवहार का आरोप लगाए बिना एक संतुलित रिपोर्टिंग है; बल्कि इसी तरह का एक और उदाहरण संदर्भित किया गया है और यह भी देखा गया है कि उक्त घटना में अधिकारी केवल वरिष्ठ अधिकारियों के साथ अपने व्यक्तिगत संरक्षण के कारण बिना किसी कार्रवाई के बच निकलने में सक्षम था। पूरे लेख से, यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि वादी पर कोई दुर्भावनापूर्ण झूठे आरोप या आचरण लगाए गए थे। बल्कि, *जाँच शुरू करने* और उसके लंबित रहने के दौरान, परिवीक्षा के दौरान वादी की बर्खास्त करने की सच्चाई विवाद में नहीं है। एक महिला की आपत्तिजनक बातचीत वाले टेप पर भी कोई विवाद नहीं है। समाचारपत्र के लेख में किसी अन्य तथ्य का उल्लेख नहीं किया गया है। यह

स्पष्ट है कि रिपोर्टिंग अपने स्रोतों के आधार पर एक उचित टिप्पणी थी और मानहानिकारक नहीं थी।

81. दूसरा समाचार दिनांक 29.08.2002 को हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित हुआ, जो इस प्रकार है:

> ***"परिवीक्षाधीन की बर्खास्तगी को लेकर विदेश विभाग उलझन में***
>
> *केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण (सी.ए.टी.) के हालिया स्थगन आदेश के बाद विदेश विभाग में दोषारोपण का खेल चल रहा है, जिसमें विदेश विभाग को 1999 बैच के भारतीय विदेश सेवा के अधिकारी महावीर सिंघवी को बर्खास्त करने से रोका गया है।*
>
> *बर्खास्तगी प्रकरण शुरू से ही विवाद में फंसा हुआ था, अब कुछ नए तथ्य सामने आने के साथ मामला पेचीदा हो गया है।*
>
> *सूत्रों का कहना है कि परिवीक्षाधीन को बर्खास्त करने का आदेश तत्कालीन विदेश मंत्री जसवंत सिंह ने एक कथित टेप बातचीत के आधार पर दिया था और कोई औपचारिक जाँच नहीं की गई थी।*
>
> *एम.ई.ए. ने अधिकारी को इस आधार पर बर्खास्त करने का आदेश दिया था कि वह अभी भी परिवीक्षाधीन है और उसे दुर्व्यवहार के लिए बर्खास्त किया जा सकता है।*
>
> *हालांकि, सी.ए.टी. इस तर्क से संतुष्ट नहीं था। उन्होंने कहा कि चूंकि उसने प्रशासनिक प्रक्रिया परीक्षा में 97 प्रतिशत अंक प्राप्त किए थे और अपना प्रशिक्षण पूरा कर लिया था, इसलिए बर्खास्तगी द्वारा उसकी सेवा समाप्त करने का कोई आधार नहीं था। साउथ ब्लॉक के अंदरूनी सूत्रों का*

कहना है कि जब अधिकारी को बर्खास्त किया गया तो यह एक आश्चर्य की बात थी क्योंकि यह कठोर निर्णय विदेश सेवा के इतिहास में अभूतपूर्व था और इसके अलावा, यह निर्णय बिना किसी जाँच के लिया गया था।

"कोई भी सच्चाई नहीं जानता, लेकिन इस प्रकरण में कुछ और भी था क्योंकि निर्णय ऊपर से गुपचुप तरीके से लिया गया था।" एक अधिकारी ने टिप्पणी की।

लेकिन एक सूत्र ने बचाव किया "उन्होंने केवल मंत्री के आदेशों का पालन किया था।"

स्थगन आदेश के साथ, अधिकारी ने कथित तौर पर विदेश सचिव कंवल सिब्बल से हस्तक्षेप की मांग की है ताकि उन्हें साउथ ब्लॉक में बैठने के लिए जगह आवंटित की जा सके।"

82. यह स्पष्ट है कि केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण (सी.ए.टी.) द्वारा वादी को बर्खास्त करने के आदेश पर रोक लगाने के परिणामस्वरूप, विदेश कार्यालय में दोषारोपण का खेल शुरू हो गया। यह भी बताया गया है कि बर्खास्तगी प्रकरण में कुछ नए तथ्यों के सामने आने से पेचीदा हो गया है। एम.ई.ए. के आदेश ने अधिकारी को इस आधार पर बर्खास्त कर दिया कि वह अभी भी परिवीक्षाधीन है और उसे बर्खास्त किया जा सकता है, हालांकि, सी.ए.टी. इससे संतुष्ट नहीं था। यह साउथ ब्लॉक के अंदरूनी सूत्रों से रिपोर्टर को मिली जानकारी के बारे में भी बताता है कि विदेश मंत्रालय द्वारा की गई इस तरह की कार्रवाई विदेश सेवा के इतिहास में अभूतपूर्व थी, क्योंकि यह निर्णय बिना किसी जाँच के लिया गया था। अंदरूनी सूत्र ने यहाँ तक बताया कि कोई भी सच्चाई नहीं जानता क्योंकि यह निर्णय बहुत ही गुप्त तरीके से लिया गया था।

83. रिपोर्टिंग का लहजा और स्वरूप, तथ्यों का एक सरलीकृत विवरण तथा रिपोर्टर द्वारा प्राप्त अंदरूनी जानकारी पर आधारित कुछ अंतर्वेशन को दर्शाता है। यह एक ज्ञात तथ्य है कि रिपोर्टर अपने स्वतंत्र स्रोतों से जानकारी एकत्र करते हैं जो प्रकटीकरण के विशेषाधिकार से सुरक्षित हैं। इस लेख में बताए गए किसी भी बयान को वादी की छवि को खराब करने वाला नहीं कहा जा सकता है। बल्कि, इसमें बिना किसी जाँच के वादी को बर्खास्त करने के कार्य की निंदा करने का भाव है।

84. तीसरा लेख समाचारपत्र *'हिंदुस्तान' (हिंदी संस्करण)* दिनांक 31.07.2002 को प्रकाशित हुआ था। इसका शीर्षक *"शादी से इंकार करने पर अधिकारी ने युवती का जीना हराम किया"*। इस खबर में यह भी कहा गया कि सूत्रों ने खुलासा किया है कि किसी लड़की को पिछले तीन वर्षों से वादी द्वारा काफी परेशान किया जा रहा था। उसकी कठिनाई तब शुरू हुई जब वह आई.ए.एस. कोचिंग अकादमी में वादी से मिली और वे दोस्त बन गए। वादी ने यू.पी.एस.सी. उत्तीर्ण किया और आई.एफ.एस. में चुना गया, जबकि लड़की कोई रैंक नहीं प्राप्त की और वह अपना काम शुरू की थी। वादी ने उससे शादी करने का प्रस्ताव रखा था, जिसे उसने अस्वीकार कर दिया था। यह इनकार उसके लिए बहुत भारी साबित हुआ क्योंकि इसने उसका जीवन नरक बना दिया।

85. पहला पहलू यह है कि यह रिपोर्टर के विशेषाधिकार प्राप्त स्रोतों के आधार पर की गई रिपोर्टिंग है। इसके अलावा, साक्ष्य में प्रतिवादी सं. 1 द्वारा

यह स्पष्ट किया गया कि रिपोर्ट स्रोत की प्रामाणिकता और विश्वसनीयता के विस्तृत सत्यापन के बाद प्रकाशित की गई थी। किसी लेख के छपने या प्रकाशित होने से पहले नैतिकता और नैतिकता के उच्चतम मानकों का पालन किया जाता है। रिपोर्ट हमेशा प्रामाणिक और अविश्वसनीय स्रोतों पर आधारित होती हैं। यह भी बताया गया है कि लेख की विषय-वस्तु सरकार/भारत संघ द्वारा सी.ए.टी., मुख्य न्यायपीठ, नई दिल्ली में दायर जवाबी-हलफनामे पर आधारित है।

86. वादी का तर्क है कि समाचारपत्र की रिपोर्टिंग जुलाई-अगस्त, 2002 में की गई थी, जो अधिकरण के समक्ष 18.10.2002 को दायर किए गए जवाब से बहुत पहले की थी। प्रतिवादी का यह दावा कि रिपोर्ट भारत संघ द्वारा दायर जवाब पर आधारित थी, स्पष्तः गलत है।

87. यह देखना उचित है कि हालांकि जवाब बाद में दायर किया गया हो सकता है, लेकिन यह केवल उन सभी पिछले कार्यों को उल्लिखित करता है जो मंत्रालय में हुए थे और जिसके कारण अंततः वादी को बर्खास्त कर दिया गया था। जवाब में केवल मंत्रालय में उस समय जो कुछ हुआ था उसका वर्णन किया गया था और उन परिस्थितियों को समझाया गया था जिनके कारण वादी को बर्खास्त किया गया था। जवाब वास्तव में इस बात की पुष्टि करता है और बल देता है कि समाचार लेखों में जो बताया गया था वह पिछली घटनाओं का सच्चा वर्णन था। यह स्पष्ट है कि यह बताते हुए कि विभाग में कुछ टेप प्राप्त

हुए थे, जिन पर अपर सचिव द्वारा जाँच शुरू की गई थी, लेकिन जब मामला विदेश मंत्री के संज्ञान में लाया गया, तो उन्होंने तत्काल बर्खास्त करने का आदेश दिया, क्योंकि वादी अभी भी परिवीक्षाधीन था क्योंकि यह महसूस किया गया था कि संदेश जोरदार और स्पष्ट होना चाहिए कि विदेश मंत्रालय की छवि को धूमिल करने वाले इस तरह के दुर्व्यवहार को बर्दाश्त नहीं किया जा सकता है। समाचारपत्र की रिपोर्ट से पता चलता है कि लेखों में जो जानकारी दी गई है, सत्यापित स्रोतों पर आधारित है और यह भी एक तथ्य है कि मंत्रालय में जो कुछ भी हुआ था, वह अंततः वादी को बर्खास्त करने का कारण बना।

88. इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि समाचारपत्र के लेखों ने *तटस्थ/सच्चे* तरीके से केवल सत्यापित स्रोतों से एकत्र की गई जानकारी के आधार पर समाचार की सूचना दी है। इसके बाद भारत संघ द्वारा दाखिल जवाब से रिपोर्ट की गई खबर की सत्यता की पुष्टि की गई और यह नहीं कहा जा सकता कि रिपोर्टिंग दुर्भावनापूर्ण थी या सद्भावना से नहीं की गई थी। प्रतिवादीगण ने केवल लोकाधिकारी क्षेत्र में समाचार लाने के अपने कर्तव्य का निर्वहन किया है, जिसके बारे में आम जनता को सूचना पाने का अधिकार है।

89. अंत में, यह देखा जा सकता है कि वादी को उस महिला के खिलाफ वास्तविक शिकायत हो सकती है जिसकी बातचीत कथित रूप से मंत्रालय को प्राप्त टेप में निहित थी, लेकिन जाहिर है, वादी पहले से ही उसके खिलाफ अपना स्वतंत्र उपाय कर रहा है। यदि यह कोई सांत्वना है, तो यह देखा जा

सकता है कि प्रतिष्ठा इतनी कमजोर नहीं है कि इसे वादी के करियर की शुरुआत में हुई किसी अप्रिय घटना से बर्बाद या नष्ट किया जा सकता है। प्रतिष्ठा वह है जो व्यक्ति अपने आचरण और कार्य से समय के साथ-साथ बनाता है। इस पूरी घटना ने वादी को पूरी तरह से तोड़कर रख दिया होगा और परेशान कर दिया होगा, लेकिन यह उसका सच्चाई में दृढ़ विश्वास है जिसने उसे अपने अधिकारों के लिए खड़े होने और अपनी नौकरी में बहाल होकर अपना सम्मान वापस पाने के लिए *केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण* का रुख करने का साहस दिया।

90. जनता के सूचना प्राप्त करने के अधिकार को मीडिया के सत्य रिपोर्टिंग के कर्तव्य और उसकी प्रतिष्ठा की सुरक्षा के व्यक्तिगत अधिकार के साथ संतुलित करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि जो लेख दो वादों का विषय-वस्तु हैं, वे अपने आप में मानहानिकारक नहीं हैं।

91. मुद्दा संख्या 1 का फैसला वादी के खिलाफ किया जाता है।

मुद्दा संख्या 2: ***क्या वादी हर्जाने का हकदार है, यदि है, तो कितना? वादी पर साबित करने का भार है।***

मुद्दा संख्या 3: ***क्या वादी ब्याज पाने का हकदार है, यदि है, तो किस राशि पर, किस अवधि के लिए और किस दर पर? वादी पर साबित करने का भार है।***

92. मुद्दा संख्या 1, 2 और 3 के निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, फैसला वादी के खिलाफ किया जाता है।

मुद्दा संख्या 4: ***क्या न्यायालय फ़ीस और अधिकार क्षेत्र के उद्देश्य से वाद का उचित मूल्यांकन नहीं किया गया है और उचित न्यायालय फ़ीस का भुगतान नहीं किया गया है? वादी पर साबित करने का भार है।***

93. यह वाद वादी द्वारा शुरू में एक गरीब याचिका के रूप में दायर किया गया था, जिसे दिनांक 25.09.2007 के आदेश के द्वारा अनुमति दी गई थी, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि एस.डी.एम., सी.पी. की रिपोर्ट के अनुसार, वादी के पास 28,740/- रूपये की कुल संपत्ति थी। यह निष्कर्ष निकाला गया कि उसके पास न्यायालय फ़ीस का भुगतान करने के लिए पर्याप्त साधन नहीं थे, जो दोनों वाद में लगभग 4.92 लाख रूपये थे। इस प्रकार आवेदन को अनुमति दी गई और वाद दर्ज करने का निर्देश दिया गया।

94. जबकि वादी को शुरू में उसकी निर्धनता के कारण न्यायालय फ़ीस का भुगतान करने से छूट दी गई थी, परन्तु अब ऐसी कोई स्थिति नहीं है। वादी द्वारा दावे किए गए हर्जाने पर अपेक्षित न्यायालय फ़ीस का भुगतान नहीं किया गया। इसलिए, उन्हें छह सप्ताह के भीतर न्यायालय फ़ीस की कमी को पूरा करने का निर्देश दिया जाता है।

95. मुद्दा संख्या 4 का निर्णय तदनुसार किया जाता है।

<u>राहत</u>

96. मुद्दों के निष्कर्षों को देखते हुए, वादी के वाद को खारिज किया जाता है। तथापि, उन्हें छह सप्ताह के भीतर न्यायालय फ़ीस की कमी को पूरा करने का निर्देश दिया जाता है। यदि वह अपेक्षित न्यायालय फ़ीस का भुगतान करने में विफल रहता है, तो महारजिस्ट्रार भू-राजस्व के रूप में न्यायालय फ़ीस की वसूली के लिए कार्यवाही शुरू कर सकता है।

97. तदनुसार डिक्री शीट तैयार की जाए। पक्षकारगण को अपना खर्च स्वयं वहन करना होगा।

(नीना बंसल कृष्णा)
न्यायाधीश

31 मई, 2024
आर.एस./वी.ए.

<u>(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)</u>

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*